International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

नालन्दा की गुप्तकालीन मूर्तियां : एक कलात्मक अध्ययन

शोध छात्र
रोहित कुमार गुप्ता
प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

नालन्दा की गुप्तकालीन कलाओं में मूर्तिकला सर्वाधिक लोकप्रिय थी। अगर मूर्तिकला की बात की जाये तो यह भी कला का एक महत्वपूर्ण अंग है जिस तरह से हमारे शरी में कई प्रकार के अंग है और उनका अपना महत्व है ठीक उसी प्रकार कला के अन्तर्गत मूर्तिकला का अपना महत्व है। जो मानव जीवन के अभिन्न अंग के रूप में लौकिक परम्पराओं में व्याप्त है। जीवन के विभिन्न आदर्शों की प्रगति ही मूर्तिकला का उद्देश्य रहा है। 'कला कला के लिए' का सिद्धान्त मूर्तिकला में विरला ही प्रयुक्त है। इसमें तो हमारी धार्मिक, दार्शनिक एवं सांस्कृतिक परम्पराएँ समाहित है किन्तु दृश्य नही है। इसीलिए गुप्तकालीन मूर्तिकला विचार या भाव प्रधान मानी गयी है।

भारतीय कला के इतिहास में गुप्तकाल को इसलिए महान युग कहा जाता है– क्योंकि कलाकृतियों की संपूर्णता और परिपक्वता जैसी चीजें इससे पहले कभी नही रही। इस युग की कलाकृतियों, मूर्तिशिल्प, शैली एवं संपूर्णता, सुंदरता एवं संतुलन जैसे अन्य कला तत्वों से सुसज्जित हुई।

गुप्त युग की कला को क्लासिकल युग की संज्ञा से सुशोभित किया जाता है यहाँ पर वास्तुकला के ही समान मूर्तिकला का भी इस युग में सम्यक विकास हुआ। लेकिन प्रश्न यह उठता है कि नालन्दा एक अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के रूप में प्रसिद्ध था और वर्तमान समय में भी है तो यहां पर मूर्तिकला का प्रचलन कैसे हुआ। क्या है शिक्षा के साथ–साथ मूर्ति निर्माण केन्द्र के रूप में प्रसिद्ध था ?

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

नालन्दा के उत्खनन के फलस्वरूप यहां से बड़ी संख्या में मूतियाँ प्राप्त हुई, जिनमें बौद्ध तथा हिन्दू दोनों धर्मों के देवी–देवताओं की मूर्तियाँ प्राप्त हुई है जो इस बात की पुष्टि करती है कि मूर्ति निर्माण केन्द्र के रूप में नालन्दा का उद्भव गुप्तकाल में हुआ तथा पाल, सेन काल तक यह अपने विकास के चरमोत्कर्ष पर था। यहाँ पर मूर्तिकारों ने गच, मिट्टी पाषाण तथा धातु के माध्यमों से मूतियों का निर्माण किया। गुप्तकाल मूर्तिकला के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण काल माना जाता है।, इस काल में देश के कई भागों में मूर्ति निर्माण केन्द्रों का विकास हुआ जो विभिन्न तरीकों से कला को अभिव्यक्ति प्रदान करने में तल्लीन थे।[1] देश के अन्य भागों की तरह इस काल में बिहार में भी पाटलिपुत्र तथा उसके आस–पास के क्षेत्रों में मूर्ति निर्माण केन्द्रों की स्थापना हुई। आर0 डी0 बनर्जी ने इसे 'पाटलिपुत्र कला केन्द्र' का नाम दिया है।[2] इस कला केन्द्र की प्रारम्भिक मूर्तियों पर सारनाथ शैली का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। उदाहरण स्वरूप घुंघराले लटों का अलंकरण, विशेष प्रकार के उष्णीष तथा सीधी भौंहें। पाटलिपुत्र कला केन्द्र का विस्तार केवल पाटलिपुत्र की सीमा तक ही नही अपितु नालन्दा, राजगृह, बोधगया तथा बिहार के कई कला केन्द्रों तक था। वी. एस. अग्रवाल भी इस कला केन्द्र के विस्तार को राजगृह, नालन्दा तथा बोधगया तक मानते है।[3] नालन्दा के समीप स्थित गांवों, जैसे बड़गांव, सूरजपुर, कपटिया, बेगमपुर, जगदीशपुर आदि में आज भी अत्यधिक संख्या में मूर्तियां बिखरी पड़ी है जिनकी पूजा स्थानीय जनता द्वारा की जाती है क्योंकि ये मूर्तियां नालन्दा के मूर्ति निर्माण केन्द्र की साक्ष्य है क्योंकि इतनी अधिक संख्या में मूर्तियां अन्यत्र से नही लायी गयी होगी। अत्यधिक संख्या में प्राप्त मूर्तियाँ जो इस बात की पुष्टि करती है कि अगर नालन्दा मूर्ति निर्माण का केन्द्र के रूप में प्रसिद्ध हुआ है तो यह गुप्तकालीन कला की देन थी। संकालिया के अनुसार नालन्दा गुप्तकाल में ही मूर्ति निर्माण का केन्द्र बन गया था। उनका मानना है कि भारतीय दर्शन के साथ–साथ मूर्तिकला के क्षेत्र में भी नालन्दा अद्वितीय था।[4] नालन्दा के स्थानीय मूर्तिकारों ने

गुप्तकाल में पूर्व मौर्य, ग्रीकों, बैक्ट्रियन, पारसियन, मथुरा, अमरावती तथा अन्य मूर्ति केन्द्रों की विशेषताओं को अपनाकर स्वयं की पूर्व की रचनाओं से हटकर एक नवीन बुद्ध मूर्ति का निर्माण किया जो अपने आप में अद्वितीय थी।

यह सर्वविदित है कि नालन्दा महाविहार की स्थापना गुप्तकाल में हुई थी। गुप्त सम्राट भागवत सम्प्रदाय के उपासक थे। फिर भी नालन्दा से भागवत धर्म की मूर्तियां न के बराबर प्राप्त होती है। प्रश्न यह उठता है कि यहां पर बौद्ध मूर्तियों का निर्माण अत्यधिक संख्या में कैसे हुआ ?

गुप्तकालीन शासको ने धर्म सहिष्णुता का परिचय दिया। यही कारण था कि उन्होंने बौद्ध धर्म को भी पर्याप्त संरक्षण प्रदान किया। जिसके कारण नालन्दा से अत्यधिक संख्या में बौद्ध मूर्तियां प्राप्त हो सकी। बौद्धकला के साथ–साथ हिन्दु कला के विकास को भी यहां पर समान अवसर प्रदान किया गया। हिन्दू देव समूह में शिव, पार्वती, विष्णु, गणेश, महिषासुरमर्दिनी, सूर्य, चामुण्डा, चन्द्राणी आदि की मूर्तियां मिली है। यहां महायान सम्प्रदाय के अन्तर्गत हिन्दु देवताओं के आधार पर बौद्ध देवताओं की कल्पना की गयी तथा उन्हें थोड़े बहुत बदलाव के बाद मूर्ति रूप में विकसित किया गया। इस प्रकार सरस्वती, गणेश, सप्तमातृका जैसे हिन्दु देवी देवता, बौद्ध देवी देवता के रूप में स्वीकार कर लिये गये।[5] हिन्दु देवता इन्द्र, ब्रह्म, विष्णु, शिव तथा भैरव बौद्ध देवता के रूप में क्रमशः वज्रपाणि, मंजुश्री, अवलोकितेश्वर, हेरूक और बज्रहुंकार हो गये।[6] फलतः नालन्दा में धार्मिक संतुष्टि हेतु बड़ी संख्या में प्रस्तर तथा धातु मूर्तियों का निर्माण हुआ।

गच की मूतियां– नालन्दा की गच की मूर्तियों के निर्माण काल को निर्धारित करना अत्यन्त कठिन है। मन्दिर स्थल सख्या–3 के ईटों पर अंकित अभिलेख की लिपि छठी शताब्दी ई0 की गुप्त लिपि का तरह है तथा एक ईंट पर प्रतीत्यसमुत्पाद सूत्र के

साथ–साथ 516–17 ई0 की तिथि भी अंकित है।[7] कृष्णदेव भी इस अभिलेख के आधार पर यहां से प्राप्त गच की मूर्तियों का काल छठी शताब्दी मानते है, पस्तु उनका विचार है कि तिथि युक्त ईंटे पुनर्निर्माण के दौरान लगायी गयी होगी।[8] कृष्णदेव के अनुसार नालन्दा की गच की मूर्तियों की गढ़न एवं वस्त्र विन्यास में सारनाथ की गुप्तकाल की झलक मिलती है, परन्तु उसकी अपनी कुछ विशेषताएं भी है जो उसकी स्वतन्त्र शैली की पहचान है। गच की मूर्तियों का निर्माण मिट्टी, बालू तथा चूने के मिश्रण से किया जाता था। नालन्दा के मन्दिर स्थल संख्या–3 के पाचवें स्तर से बड़ी संख्या में गच की मूर्तियां प्राप्त हुई है जो गुप्तकालीन मूर्तिकला का उत्कृष्ट उदाहरण है।[9] इस मन्दिर के तीसरे स्तर के चबूतरे पर गच की दो मूर्तियों के अवशेष मिले हैं, जिनके हाथ–पैर तथा सिर नष्ट हो चुके हैं। ये मूर्तियां नालन्दा की सबसे प्राचीन मूर्तियां मानी जाती है जिनका काल 5वीं शताब्दी ई0 निर्धारित किया गया है।

नालन्दा की गच की मूर्तियों में भगवान बुद्ध को मुद्रासन की मुद्रा में बैठे हुए उत्कीर्ण किया गया है।[10] जिसमें मूर्ति के अधोभाग में वस्त्र अत्यन्त महीन आवरण के रूप में दिखाया गया है। मूर्ति के एक तरफ मैत्रेय तथा दूसरी तरफ अवलोकितेश्वर का अंकन है। बुद्ध, मैत्रेय एवं अवलोकितेश्वर की त्रिमूर्ति भूत, भविष्य एवं वर्तमान बुद्ध की पूजा के लोकप्रिय विचार से सम्बन्धित है[11] तथा तीसरी–चौथी शताब्दी ई0 में निर्मित गांधार की मूर्तियों में देखी जा सकती है।

नालन्दा की गच की बोधिसत्व मूर्तियां बुद्ध की मूर्तियों के अनुरूप बनायी गयी है, परन्तु कुछ बोधिसत्व मूर्तियों का अंग विन्यास मानक के अनुरूप नही है। जैसे जांघे ठीक से गोलाई लिए नही है तथा वक्ष का निचला भाग क्रमशः कमर तक आते–आते एकदम क्षीण हो गया है। सारनाथ की अवलोकितेश्वर तथा लोकनाथ की मूर्ति नालन्दा की गच की बोधिसत्व मूर्ति के प्रेरणास्त्रोतों में से एक है। भारत कला भवन में संग्रहीत 5 वीं

शताब्दी ई0 की गोवर्धनकारी कृष्ण के गले में भी व्याघ्रनख तथा चक्रयुक्त माला देखी जा सकती है। इसी प्रकार का केश विन्यास एवं व्याघ्रनख माला कार्तिकेय[12] की एक मूर्ति में दृष्टव्य है जो मंजुश्री की तरह युवा तथा कुमार कहे जाते हैं इसका सुन्दर अंग–विन्यास नालन्दा की अधिकांश गच की मूर्तियों के ही सदृश है। मन्दिर स्थल संख्या–3 में गच की मूर्तियों में मैत्रेय की कई मुद्राओं में स्थानक तथा आसीन मूर्तियां मिली है, जिन्हें रत्नों से अलंकृत दिखाया गया है तथा उनके हाथों में नागकेशर के पुष्प का अंकन मिलता है। फाहियान ने अपने यात्रा वृतान्त में मैत्रेय की लोकप्रियता का वर्णन किया है जिसकी पुष्टि उनकी गच की मूर्तियों से होती है।[13] नालन्दा की गच की मूर्तियों में तारा देवी की मूर्तियां भी अधिक संख्या में प्राप्त हुई है। मन्दिर स्थल संख्या–3 के दक्षिण–पूर्वी किनारे पर स्थित स्तम्भ के पश्चिम तरफ बनी तारा की मूर्तियां उल्लेखनीय है। मूर्ति कमल के आसन पर बैठी है। उसके पैर एक दूसरे पर चढ़े है, परन्तु पद्मासन की मुद्रा में नही है। मन्दिर स्थल संख्या–3 के एक तारा में ताय की एक आसीन मूर्ति बनायी गयी है। इस मूर्ति के कानों में एक विशाल कुण्डल तथा गले में मनकों की माला है। पारदर्शी चोली बायें कन्धे तक बायें रत्न तथा पेट की कुछ हिस्से को ढकते हुए बनायी गयी है। पेट का यह दृश्य अन्य गुप्तकालीन मूर्तियों, यथा 5वीं शताब्दी ई0 में निर्मित कुमारी तथा महिषासुरमर्दिनी दुर्गा की मूर्तियों में भी देखा जा सकता है।[14] मन्दिर स्थल संख्या–3 की विशाल सीढ़ी के उत्तर–पूर्वी तरफ गच की बनी अवलोकितेश्वर की एक मूर्ति महत्वपूर्ण है जो सिंघे के ऊपर बने कमल पर विराजमान है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि नालन्दा की गच की मूर्तियां तथा उन पर बने अलंकरण तत्कालीन केन्द्रों की मूर्तियों की तुलना में श्रेष्ठ है। नालन्दा की गचकारी प्रतिमाए किसी कला केन्द्र से सम्पूर्ण रूप से प्रभावित नही है, बल्कि परम्परागत रूप से चले आ रहे कला के आयामों को ध्यान में रखकर स्वतन्त्र रूप से निर्मित है तथा वे 5वी से 7वी शताब्दी ई0 के मध्य की रिक्तता को भरने में सफल है।[15]

पाषाण मूर्तियाँ– नालन्दा से प्राप्त पाषाण मूर्तियों पर (5वी–6वी) सारनाथ की गुप्त कला शैली का स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचार होता है। नालन्दा के मन्दिर स्थल संख्या–12 से भूरे पत्थर द्वारा निर्मित बोधिसत्व की एक मूर्ति[16] प्राप्त हुई है अगर हम बोधिसत्व की मूर्ति का गहन अध्ययन करे तो इसकी तुलना राष्ट्रीय संग्रहालय नई दिल्ली में सुरक्षित 5वी शताब्दी ई0 तथा सारनाथ से प्राप्त बोधिसत्व मूर्ति से कर सकते है। अतः स्पष्ट है कि नालन्दा के मन्दिर स्थल संख्या–12 से प्राप्त बोधिसत्व की मूर्ति पर सारनाथ कला का प्रभाव है। लेकिन नालन्दा से प्राप्त मूर्तियों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि नालन्दा की मूर्तिकला का विकास 5वी शताब्दी ई0 के उत्तरार्द्ध में निर्मित सारनाथ की मूर्तियों से हुआ तथा 7वी शताब्दी ई0 तक आते–आते इसकी अपनी स्वतन्त्र शैली विकसित हो गयी।[17] यह बोधिसत्व की मूर्ति खड़ी अवस्था में निर्मित है। इसके छरहरे शरीर पर चिपका पारदर्शक वस्त्र, आभूषण, प्रभामण्डल तथा जटा मुकुट पर सारनाथ शैली का प्रभाव है। कालान्तर में मुकुट तथा जटा का अलंकरण अधिक होने लगा एवं ध्यानी बुद्ध की मूर्ति भी छोटी बनने लगी। इस मूर्ति के चेहरे की गोल लहरदार बनावट तथा होंठो का अंकन मूर्ति को एक नया स्वरूप प्रदान करते है, क्योंकि पहले मूर्तियां सपाट बनती थी।

सारनाथ कला का प्रभाव नालन्दा की एक मूर्ति में कुछ दिखाई देता है। अभय मुद्रा में खड़ी मूर्ति ग्रे स्टोन से निर्मित है, परन्तु आकर्षक ढंग से तराशी नही गयी।[18] इस पर मथुरा कला का भी कुछ प्रभाव दिखाई देता है। मूर्ति के शरीर के अनुपात में सिर चार गुना बड़ा है। इस मूर्ति के कुछ लक्षण मथुरा की मूर्ति से मिलने के बावजूद इस पर सारनाथ का अधिक प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। सारनाथ तथा मथुरा की 5वी शताब्दी ई0 के उत्तरार्द्ध की मूर्तियों का सिर इस प्रकार बना है कि उसके ललाट का केन्द्र सिर के पीछे बने गोल प्रभामण्डल के केन्द्र से मेल खाता है, परन्तु नालन्दा की इस मूर्ति में ऐसा

नही दिखता। 5वी शताब्दी ई0 के उत्तरार्द्ध मे बनी यह बुद्ध मूर्ति कालान्तर में बिहार तथा बंगाल की मूर्तिकला के विकास में सहायक सिद्ध हुई।[19]

नालन्दा से एक बुद्ध शीर्ष प्राप्त हुआ है जो गुलाबी बलुए पत्थर से निर्मित है। जिसका काल सम्भवतः छठी शताब्दी ई0 है, जिस पर सारनाथ कला शैली का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। नालन्दा के समीप कई कला केन्द्र थे, परन्तु वे एक–दूसरे से प्रभावित नही हुए। गया तथा भोजपुर–रोहतास जिले के कला केन्द्र मध्य भारत की कला परम्परा से प्रभावित है जबकि नालन्दा की मूर्तियां सारनाथ से प्रभावित है।

उपर्युक्त अध्ययन से प्रश्न यह उठता है कि क्या नालन्दा मूर्तिकला की अपनी स्वतंत्र शैली थी या नही ? – जिस तरह से जन्मे बच्चे पर अपने माता–पिता, परिवार व समाज के रहन–सहन, आचरण का प्रभाव रहता है लेकिन जब वह धीरे–धीरे वयस्क होने की ओर अग्रसर होता है तो उसके अपने आचरण रहन–सहन का भी विकास होता है जो उसे विशिष्ट बनाता है। ठीक उसी प्रकार जब नालन्दा में मूर्तिकला का जन्म (5वी शताब्दी) हुआ तो उस पर सारनाथ कला शैली का प्रभाव था लेकिन जब वह वयस्क होने की ओर अग्रसर हुआ तो उसकी अपनी स्वतंत्र शैली विकसित हुई जो उसे अपने आप में अद्वितीय बनाती है।

धातु मूर्तियाँ– नालन्दा के उत्खनन के परिणामस्वरूप गच एवं पत्थर की मूर्तियों के अतिरिक्त धातु की मूर्तियां भी अत्यधिक संख्या में प्राप्त हुई थी। यहां की 8वी शताब्दी ई0 की प्रारम्भिक धातु मूर्तियों पर गुप्त कला शैली की छाप है, परन्तु 9वी शताब्दी ई0 के उत्तरार्द्ध से पाल कला शैली विकसित होती हुई 11वीं शताब्दी ई0 की मूर्तियों में कोमल कमनीयता झलकती है, परन्तु धीरे–धीरे उनका कोमल शरीर कठोर होता जाता है तथा 10वी शताब्दी ई0 तक एक आदर्श रूप ग्रहण कर लेता है।[20] प्रारम्भिक धातु मूर्तियों में

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

उनकी छाती में जीवन के लक्षण दिखाई देते हैं, परन्तु बाद की धातु मूर्तियों मे यह लक्षण उनके होठों, कन्धों एवं घुटनों में भी देखे जा सकते हैं।

नालन्दा में मूर्तिकला का जन्म गुप्तकाल की देन है। जो देश–विदेश में केवल भिक्षा केन्द्र के रूप में प्रसिद्ध था उसे कला केन्द्र के रूप में प्रसिद्ध करने का श्रेय गुप्तकालीन मूर्तिकारों को जाता है जिसके चलते नालन्दा मूर्ति निर्माण केन्द्र के रूप में स्थापित हुआ। नालन्दा से गच, पाषाण व धातु मूर्तियां अत्यधिक संख्या में प्राप्त हुई। नालन्दा की प्रारम्भिक मूर्तियों में मूर्तिकारों ने मुख्य मूर्ति पर ही अपनी कला एवं श्रद्धा को समर्पित किया है। अतः वे इन्ही अलंकरणों के माध्यम से अपनी कल्पना को संतुष्ट कतरे थे। इस समय की मूर्तियों में स्वाभाविक लोच एवं गति का है जिसका कालान्तर में अभाव दिखता है परन्तु बारीक नक्काशियों एवं अलंकारों की भरमार है। शुरूआती दौर में यहां पर सारनाथ की गुप्तकालीन बौद्ध कला के अनुसार मूर्तियों का निर्माण किया गया, परन्तु धीरे–धीरे यह प्रभाव कम होता गया तथा उसकी अपनी स्वतन्त्र शैली भी विकसित हो गयी। नालन्दा गुप्तकालीन दूसरा बौद्ध स्थल है जिसका गहरा सम्बन्ध अन्य बौद्ध स्थलों से भी है।[21]

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

सन्दर्भ ग्रन्थ–

1. अग्रवाल, वी.एस., स्टडी ऑफ इण्डियन आर्ट, वाराणसी, 1965, पृष्ठ– 293
2. बनर्जी, आर.डी., एज ऑफ इम्पीरियल गुप्ताज, बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी, वाराणसी, 1933, पृष्ठ–17
3. अग्रवाल, वी.एस., वही
4. संकालिया, एच.डी., दी नालन्दा यूनिवर्सिटी, ओरियन्टल पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 1972, पृष्ठ– 261
5. सहाय, भगवन्त, आइकनोग्राफी आफ माइनर हिन्दू एण्ड बुद्धिस्ट डिटीज, अभिनव पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1975, पृष्ठ– 260
6. उपासक, सी.एस., नालन्दा–पास्ट एण्ड प्रजेन्ट, नालन्दा, 1977, पृष्ठ– 86
7. मिश्रा, बी.एन. नालन्दा, वालूम–2, बी.आर. पब्लिशिंग कारपोरेशन, दिल्ली, 1998, पृष्ठ– 62
8. श्रीवास्तव, ए.पी., नालन्दा की स्थापत्य एवं मूर्तिकला, दिल्ली, 1994, पृष्ठ– 96
9. वह, पृष्ठ– 84
10. मुंशी, के.एम., सागा ऑफ इण्डियन स्कल्पचर, बम्बई, 1957, फलक– 49
11. उपासक, सी.एम., वही, पृष्ठ– 881
12. हार्ले, जे.सी., गुप्त स्कल्पचर्स, आक्सफोर्ड, 1974, फलक– 65
13. उपासक, सी.एस., वही, पृष्ठ– 88
14. श्रीवास्तव, ए.पी., वही, पृष्ठ– 94
15. मिश्रा, बी.एन., वही, पृष्ठ– 66, श्रीवास्तव, ए.पी., वही, पृष्ठ– 98
16. श्रीवास्तव, ए.पी., वही, चित्र– 10
17. हटिंगल, एस.एल., वी पाल–सेन स्कूल ऑफ स्कल्पचर, लाइडेन, 1984, पृष्ठ–18
18. वही, पृष्ठ–17, चित्र–10
19. श्रीवास्तव, ए.पी., वही, पृष्ठ–100
20. बन्धोपाध्याय, विमल, मेटल स्कल्पचर्स ऑफ ईस्टर्न इण्डिया, पृष्ठ– 27

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

21. कृष्णदेव एवं अग्रवाल, वी.एस., दी स्टोन टेम्पुल ऐट नालन्दा, जर्नल ऑफ उत्तर–प्रदेश, हिस्टोरिकल सोसाइटी, अंक– 23, 1950, पृष्ठ– 198